9. डॉ. आंबेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय, खंड : 25, आंबेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, नई दिल्ली/संस्करण : 2020/पृष्ठ 72-73
10. डॉ. आंबेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय, खंड : 17, आंबेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, नई दिल्ली/संस्करण : 2020/पृष्ठ 27
11. डॉ. आंबेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय, खंड : 17, आंबेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, नई दिल्ली/संस्करण : 2020/पृष्ठ 13
12. डॉ. आंबेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय, खंड : 40, आंबेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, नई दिल्ली/संस्करण : 2020/पृष्ठ 306
13. डॉ. आंबेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय, खंड : 40, आंबेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, नई दिल्ली/संस्करण : 2020/पृष्ठ 312
14. डॉ. आंबेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय, खंड : 40, आंबेडकर प्रतिष्ठान, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, नई दिल्ली/संस्करण : 2020/पृष्ठ 319
15. डॉ. आंबेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय, खंड : 40/पृष्ठ 321

डॉ. आंबेडकर : संस्कृत भाषा और आधुनिक संस्कृत

–डॉ. संजय कुमार

भारत महापुरुषों का देश है। यहाँ पर मानव क्या ईश्वर भी अवतरित हुए हैं, राम और कृष्ण को हमारी परम्परा में ईश्वर माना जाता है, इसी तरह चाणक्य, चन्द्रगुप्त, महाराणा प्रताप, गुरुगोविन्द सिंह, महात्मा गांधी, डॉ. भीमराव आंबेडकर, सुभाषचन्द्र बोस, सरदार बल्लभभाई पटेल, बालगंगाधर तिलक आदि लोकनायक महापुरुष भी अवतरित हुए हैं जिनके पराक्रम, पौरुष, त्याग और समर्पण से राष्ट्र का मस्तक सदैव गौरवान्वित होता रहता है। ऐसे ही महापुरुष डॉ. भीमराव आंबेडकर भी हैं जिन्हें राष्ट्रीय प्रतीक पुरुष के रूप में जाना जाता है। डॉ. भीमराव आंबेडकर बचपन से ही कुशाग्र बुद्धिसम्पन्न और अधिकार के प्रति सदैव सचेत रहने वाले महामानव थे। भारतीय समाज एवं संस्कृति की गंभीर समझ उन्हें युवावस्था में ही प्राप्त हो गयी थी, उन्हें राष्ट्र और राष्ट्रीय समस्याओं की बहुत चिंता थी जिसके समाधान के लिए उन्होंने सर्वप्रथम अध्ययन किया। उनका मानना था कि अध्ययन ही सभी समस्याओं के निराकरण का साधन है। डॉ. भीमराव आंबेडकर आजीवन सबके लिए शिक्षा को अनिवार्य मानते थे। वे कहते थे कि शिक्षा सबके लिए सर्व सुलभ होनी चाहिए। डॉ. भीमराव आंबेडकर भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के एक प्रमुख राजनेता एवं सुधारवादी चिन्तक के साथ-साथ वैश्विक समस्याओं के समाधान के प्रति प्रयत्नशील रहने वाले व्यक्ति थे। डॉ. भीमराव आंबेडकर के मन में भारत की दुर्दशा, बेरोजगारी, स्वास्थ्य, पर्यावरण और संस्कृति के उन्नयन की बेजोड़ कमाना थी। उनके प्रयास से देश में ऐसी राष्ट्रीय भावना जागृत हुई जिससे भारत को समानता की दृष्टि

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग, डॉ. हरीसिंह गौर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)
Email : drkumarsanjaybhu@gmail.com

मिली, वे देश से ऊँच-नीच की भावना को समाप्त करना चाहते थे। क्या स्त्री, क्या पुरुष, क्या दलित, क्या पिछड़ा और क्या सवर्ण, सभी तो ईश्वर की अप्रतिम रचना हैं। सबका आदर-सम्मान समान व्यवहार और सबके शिक्षा के अधिकार की वे सदैव वकालत करते थे। उनका मानना था प्रत्येक व्यक्ति या राष्ट्र का विकास बिना भेदभाव के वातावरण से ही संभव है। वैदिक काल इस दृष्टि से स्मरणीय है वहाँ वेदान्त के प्रभाव से सभी मानव के प्रति समुचित व्यावहार दिखलाई पड़ता है। हाँ, स्मृति काल सामाजिक दृष्टि से ठीक नहीं था। आंबेडकर मनुष्य जीवन के लिए स्वतंत्रता के बड़े हिमायती थे। उनका मानना था कि प्रत्येक व्यक्ति के लिए स्वतंत्रता उसका अधिकार है। किसी के लिए भी दासता या परतंत्रता अभिशाप है। मनुष्य के व्यक्तित्त्व का सम्पूर्ण विकास स्वतंत्रता में ही संभव है।

डॉ. भीमराव आंबेडकर को प्राचीन भाषा साहित्य से विशेष लगाव था? जिसमें संस्कृत मुख्य है। इसका भाषा सौष्ठव और व्याकरणिक प्रयोग विश्व के लिए उपादेय हैं। संस्कृत भारतीय संस्कृति की उत्स भूमि है। संस्कृत के वर्ण-वर्ण में भारतीय संस्कृति का कण-कण समाहित है। विशेष रूप से यदि वैदिक साहित्य को देखा जाय तो वहाँ जो वेदांत की दृष्टि अपनाई गयी है, वह सराहनीय है, जिसमें जीव मात्र के प्रति जो ईश्वर का भाव दिखलाया गया है वह विश्व साहित्य की अमूल्य निधि है। यहाँ एक बात और समझने की आवश्यकता है कि जिन स्मृति काल की कुरुतियों और परम्पराओं का डॉ. आंबेडकर खण्डन करते हैं, तो उन्हें बिना पढ़े और समझे नहीं करते हैं बल्कि तार्किक रूप से करते हैं। उनका तर्क अश्वघोष की तरह है। अश्वघोष भी अपने बज्रसूची में अनेक तथ्यहीन विषयों को उपस्थित करते हैं और आज के समाज के लिए उन विषयों का निराकरण करते हैं। डॉ. आंबेडकर को संस्कृत का गहरा अध्ययन बोध था। वे भाषा के रूप में संस्कृत को बढ़ाना चाहते थे जिसका कारण मैं यह मानता हूँ कि संस्कृत ही एक ऐसी भाषा है जो उत्तर से लेकर दक्षिण तक के सभी भारतीयों को एकता के सूत्र में बांधने का सामर्थ्य रखती है। वे संस्कृत को भाषा के रूप में सबसे अधिक स्वीकार करते थे जिसका प्रमाण संस्कृत आयोग के प्रतिवेदन 1956-57 के दसवें अध्याय के पैरा संख्या छः से मिलता है कि डॉ. आंबेडकर ने संस्कृत को राजभाषा बनाने का समर्थन किया था। डॉ. आंबेडकर अपने भाषणों में भी संस्कृत का समर्थन करते थे। जब वे कानून मंत्री थे, तब भी अपनी बात संस्कृत भाषा के पक्ष में ही रखे थे। डॉ. आंबेडकर संस्कृत को जानते भी थे और बोलते भी थे। बताया जाता है कि संविधान सभा में राजभाषा के संबंध में बातचीत चल रही थी तब डॉ. आंबेडकर और प. लक्ष्मीकांत मैत्रा परस्पर संस्कृत में ही वार्तालाप कर रहे थे, जिसके विषय में तत्कालीन समाचार पत्र 'आज' ने लिखा भी था। एक बार की बात है इंडियन शिड्यूल फेडरेशन की अखिल भारतीय कार्यकारी समिति का सेमिनार आयोजित

था। जिसमें आंबेडकर ने राजभाषा के रूप में संस्कृत के प्रस्ताव को लाने का श्लाघनीय प्रयास किया था। लेकिन श्री बी.पी. मौर्या आदि के विरोध के कारण इस प्रस्ताव को उन्हें वापस लेना पड़ा। लेकिन सितम्बर 1949 में अनेक प्रयास के बाद संस्कृत को भी आठवीं अनुसूची में सम्मिलित कर लिया गया।

डॉ. आंबेडकर एक बड़े लेखक भी थे उनके द्वारा अनेक भारतीय तथा विदेशी भाषाओं में ग्रन्थ लिखे गए हैं। उनके मूल्य जीवन दर्शन, आदर्श, स्वतंत्रता आन्दोलन आदि के कार्य को इतिहास आलोचना आदि के ग्रंथों के साथ-साथ साहित्य में भी साहित्यकारों ने गढ़ना प्रारम्भ कर दिया। जिसमें संस्कृत भी बढ़-चढ़कर सहगामी बनी क्योंकि संस्कृत का इतिहास साक्षी है, उसका तो ध्येय ही आदर्श चरित निर्माण है। उसी की पूर्ति में राम, कृष्ण, भीष्म, सीता, कुंती, द्रौपदी चन्द्रगुप्त, गांधी, सुभाष आदि के साथ डॉ. आंबेडकर जैसे महनीय व्यक्तित्व से आधुनिक संस्कृत आलोकित है। आधुनिक संस्कृत कवियों के द्वारा काव्य, महाकाव्य, खंड काव्य आदि के रूप में डॉ. आंबेडकर का चरित प्रकाशित है। आधुनिक संस्कृत कवि समुदाय का एक बड़ा वर्ग या तो आंबेडकर चरित को आदि से अंत तक प्रस्तुत किया है या तो उनके सिद्धांत छुआछूत, ऊँच-नीच, शिक्षा अधिकार, समता, अहिंसा आदि को साहित्य के धरातल पर उतारा है। संस्कृत साहित्य में चरित लेखन की परंपरा महर्षि वाल्मिकीय प्रणीत रामायण से ही हो जाती है। उन्होंने आदर्श चरित के रूप में रामचरित को समाज के समक्ष प्रस्तुत किया। इसी रूप में भारतीय समाज को उन्नतशील बनाने और स्वतंत्रता तथा उनमें राष्ट्रीय भावना को जागृत करने के लिए आधुनिक संस्कृत साहित्य में डॉ. भीमराव आंबेडकर के जीवन चरित आधारित साहित्य की सर्जना भी की गयी है। इस तरह यदि काव्यों की बात की जाय तो डॉ. भीमराव आंबेडकर से संबंधित 'अम्बेडकरदर्शनम् महाकाव्य' बलदेव सिंह मेहरा द्वारा लिखा गया है। इसी तरह 'भीमायनम् महाकाव्य' प्रभा शंकर जोशी, 'राष्ट्रनायकः आंबेडकरः' चन्द्र शेखर भंडारी, 'भीमाम्बेडकर शतकम्' शांति भिक्षुक शास्त्री, जिसका संपादन कार्य डॉ. प्रिय सेन सिंह के द्वारा किया गया है। 'आंबेडकर दर्शनम्' महाकाव्य सत्रह भागों में विभाजित है जिसमें आंबेडकर के जन्म से लेकर मृत्यु पर्यन्त जीवन चरित को उपस्थित किया गया है। सभी सर्ग अनुष्टुप छंद में अनुस्युत हैं। भाषा सहज एवं सरल है। भीमायनम् महाकाव्य भीमराव आंबेडकर के विराट फलक पर लिखा गया जीवनचरित है। इसमें आंबेडकर के संघर्ष, निष्ठा, द्वंद्व एवं चिन्तन के साथ जीवन के अन्तिम पड़ाव तक के विविध विषयों को प्रस्तुत किया गया है। इक्कीस सर्गों में निबद्ध यह महाकाव्य जोशी जी के तन्मयी भाव को व्यक्त करता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह काव्य जितना प्रमाणिक है उतना ही काव्य कला तथा भाषा-शैली से सुन्दर एवं आकर्षक भी है।

भीमाम्बेडकरशतकम् में ललित और सुन्दर सौ श्लोकों में सर्जन किया गया है, जिसका प्रारम्भ भगवान बुद्ध वन्दना से की गयी है–

सरस्यां पंकजं प्राप्य गुंजन्ति भ्रमरा भृशम्।
जगत्यां सृजन लब्ध्वा हर्ष तन्वन्ति मानवाः।।[1]

अर्थात् तालाबों में कमलों को पाकर भौरें बहुत गुंजन करते हैं। दुनिया में भले लोगों को पाकर उत्तम कोटि के मनुष्य हर्ष का विस्तार करते हैं। इसमें आंबेडकर से जुड़े अनेक प्रसंगों को भी उपस्थित किया गया है। उनके पारिवारिक जीवन से लेकर सामाजिक जीवन तक को विस्तार के साथ बताया गया है। इसमें एक स्थल पर कहा गया है कि आंबेडकर संस्कृत नहीं पढ़ें थे।[2] इस तरह आधुनिक संस्कृत साहित्य डॉ. आंबेडकर के जीवन-दर्शन को केवल साथ लेकर चलने वाला साहित्य नहीं है बल्कि उसे आत्मसात करने वाला साहित्य है। आधुनिक संस्कृत साहित्य के कवियों के द्वारा डॉ. आंबेडकर को समाज सुधारक, राष्ट्र उन्नायक, स्वतंत्रता सेनानी, सामाजिक चिंतक महामानव के रूप में चित्रित किया गया है जिनका आदर्श और व्यक्तित्व सभी मानव के लिए अनुकरणीय और कठिन समय में प्रेरणा प्रदान करने वाला है।

आंबेडकरदर्शनम् में आंबेडकर उपनाम के संबंध में बहुत महत्त्वपूर्ण बात लिखी गयी है। जिसमें स्वयं आंबेडकर कहते हैं-

अम्बावडेकर नाम्नः गुरोः पठितवान्शिशुः।
स जात्या ब्राह्मणश्चासीत् स्निह्यति स भृशंमयी।।
निजाऽऽहारात्सनिस्कास्य प्रतिदिनं प्रयच्छति
क्षिपतिरोटिकां पाणौ स्पृश्यास्पृश्याहेतुना।।[3]

अर्थात्, आंबावडेकर उपनाम एक ब्राह्मण अध्यापक हमें पढ़ाते थे। वह मुझे बहुत स्नेह करते थे। अर्धावकाश के समय मुझे खाना खाने के लिए स्कूल से बहुत दूर जाना पड़ता था। मेरे अध्यापक को यह बात पसन्द नहीं थी। वह अपने घर से भोजन बांधकर ले आते थे और उसमें से कुछ मुझे भी दे देते थे। छुआछूत के कारण गुरुदेव दूर से मेरे हाथ में रोटी फेंकते थे। एक दिन उन्होंने कहा कि यह तुम्हारा नाम आंबावडेकर बोलने में सरल नहीं है। इससे तेरा उपनाम आंबेडकर अच्छा है। आगे से तुम आंबेडकर उपनाम लगाया करो और उन्होंने भी रजिस्टर में ऐसा दर्ज़ कर दिया। इस प्रकार भीमराव का नाम आंबेडकर पड़ गया। आंबेडकरदर्शनम् में छुआछूत की भावना के अनेक तथ्य उपस्थित हुए हैं जिसके संबंध में एक बहुत मार्मिक प्रसंग का उद्घाटन करते हुए कहा गया है–

कूपादपि जलं पातु नैव शक्नोति बालकः।
सवर्णः शोषितं बालं स्थातुं पार्श्वेऽपि नेच्छति।।[4]

अर्थात् सवर्ण बालक भीम को अपने पास बैठाना नहीं चाहते थे। भीम बैठने के लिए टाट-पट्टी भी अपने घर से स्कूल ले जाते थे। स्कूल में प्यास लगने पर कोई सवर्ण विद्यार्थी दूर से भीम के हाथों में पानी डाल देता था तो वे पानी पी लेते थे अन्यथा पूरा दिन प्यासे ही रहते थे। यह प्रसंग एक बालक के लिए कितना असह्य रहा होगा। भूख-प्यास तो मानव के शरीर की आवश्यकता है। उसमें भी पानी पिलाना तो हमारे ग्रन्थों में पुण्य का कार्य माना गया है। लेकिन तत्कालीन सामाजिक व्यवस्था इतनी अमर्यादित हो गयी थी कि उसे पाप और पुण्य का भी बोध नहीं था। हमारे भारतीय समाज को चार वर्णों में विभाजित करने का उद्देश्य किसी का शोषण कदापि नहीं रहा है। सबके गुण और कर्म के अनुसार वर्ण विभाजन की बात श्रीमद्भागवद्गीता में स्वीकार की गयी है। वैदिक वाङ्मय के पुरुष सूक्त में जो विराट पुरुष से चार वर्णों की उत्पत्ति की बात की गयी है वह प्रतीकात्मक है। जिसका उद्देश्य सामाजिक व्यवस्था में समरसता उत्पन्न करना था कि सभी लोग एक हैं किसी में कोई अन्तर नहीं है। सभी विराट पुरुष के विभिन्न अंगों से उत्पन्न हुए हैं। इसलिए सभी एक ही माता-पिता से उत्पन्न होने के कारण एक समान हैं। लेकिन स्मृतिकाल में इस व्यवस्था और सोच को धराशाही कर दिया गया। जिसमें शुद्र जीवन को पाप का और दण्ड का भागी समझा गया है। स्मृतिकाल में शुद्र के जीवन दशा में सुधार की बात होनी चाहिए थी, लेकिन की गयी दण्ड की बात। स्मृतिकाल में इस बात की व्याख्या होनी चाहिए कि जन्म और मृत्यु तो विधाता के हाथ में है। वह जिसे चाहे जिस कुल में जन्म दे सकता है और जिसका जहाँ चाहे मृत्यु करा सकता है। इसमें शुद्र कहाँ उत्तरदायी है? जिसे उसे दण्ड का भागी समझा गया। कई जगहों पर चारों वर्णों की समानता की बात स्मृतियाँ भी करती हैं लेकिन हम अपने सुविधा और वर्चस्व स्थापित करने के लिए सर्वसमावेशी बातें नहीं रखते हैं, न करना चाहते। जिसका कारण अपने आधिपत्य का भय है। हमारा भारतीय सनातन इतना कमजोर और दुर्बल नहीं था। वह तो सम्पूर्ण चराचर जगत् को ब्रह्ममय मानने वाला है। उसके मत में द्वित्व नहीं एकत्व है। वह सबके प्रति प्रेम, दया, सहानुभूति का उपदेश देता है। वह अपराध पर दण्ड की बात करता है न कि जन्म के आधार पर दण्ड की वकालत करता है। तो एक प्रश्न उपस्थित होता है कि समाज में यह विभेद का भाव कैसे आया? कैसे वैदिक जीवन-पद्धति में विचलन आया कि हम आपस में ही अलग-अलग नहीं बल्कि एक-दूसरे के विरोधी बन बैठे। यह बड़ा प्रश्न है। 'आंबेडकरदर्शनम्' में कहा गया है कि आंबेडकर स्वयं संस्कृत पढ़ना

चाहते थे, उन्हें संस्कृत भाषा पर गर्व था। वे संस्कृत का विद्वान् बनना चाहते थे, लेकिन उन्हें संस्कृत नहीं पढ़ने दिया गया–

परं विप्रगुरोश्चैवंसंकीर्ण भावहेतुना।
अहं संस्कृतभाषायाः पण्डितौ नाभवं तदा।।[5]

अर्थात् ब्राह्मण अध्यापक के संकीर्ण विचारों के कारण मैं संस्कृत पढ़ने से वंचित रह गया। विवश होकर मुझे फारसी पढ़नी पड़ी। बाद में संस्कृत का उन्होंने गहन अध्ययन किया। 'शुद्र कौन और कैसे' और 'शूद्रों की खोज' उनकी दोनों पुस्तकें संस्कृत ग्रन्थों पर आधारित ही हैं। लेकिन मैं यहाँ स्पष्ट कर देना चाहता हूँ कि भाषा किसी एक की नहीं हो सकती, भाषा पर सबका समान अधिकार होना चाहिए। इसी से भाषा समृद्ध होती है। भाषा तो प्राणवायु के समान है जिस पर सबका अधिकार होता है। वह वायु भी किसी के लिए अलग नहीं होता और भाषा भी सबके लिए सुगम होनी चाहिए। भाषा से ही तीनों लोक प्रकाशित है। भाषा पर सबका अधिकार है, चाहे वह संस्कृत हो या तमिल, फारसी हो या अंग्रेजी। सभी भाषाओं को सीखना, जानना, समझना मनुष्य की स्वतंत्रता पर अवलम्बित है न कि जन्म के आधार पर।

'आंबेडकरदर्शनम्' में बताया गया है कि जब भीमराव 17 वर्ष के थे, तभी उनका विवाह 9 वर्ष की कन्या रमादेवी के साथ करा दिया गया। रमादेवी ने आंबेडकर की शिक्षा के लिए अपना सर्वस्व अर्पण कर दिया, इसके बाद वे अपना अध्ययन जारी रख सके। सेना में लेफ्टिनेंट भी बन गये, लेकिन उनकी ज्ञान पीपाषा शांत नहीं हुई। फलस्वरूप बड़ौदा रियासत के महाराजा सयाजी गायकवाड़ ने जून 1913 में उनकी योग्यता से प्रसन्न होकर अमेरिका में पढ़ने के लिए छात्रवृत्ति प्रदान की। जब आंबेडकर अमेरिका पहुंचते हैं तो वहाँ भारत जैसे छुआछूत की भावना नहीं थी। वहाँ का वातावरण बड़ा उदार, प्रेमपूर्ण तथा समानता पर आधारित था। वहाँ के लोग बहुत समृद्ध भी थे। जिसे देखकर आंबेडकर के मन में भारत की दुर्दशा पर बहुत पीड़ा पहुंची और वे भारत को भी समृद्ध बनाने का संकल्प ले बैठते हैं। जिसकी पूर्ति के लिए उन्होंने शिक्षा को अनिवार्य अस्त्र के रूप में स्वीकार किया। पुरुष शिक्षा और स्त्री शिक्षा दोनों समाज के लिए आवश्यक हैं। उनका ध्येय वाक्य था–विद्या पढ़ो, विद्वान बनो। जिसके लिए परिश्रम को वे अधिक महत्त्व देते थे। उनका मानना था कि परिश्रम भाग्य की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली होता है। वे कहते थे–

संघर्षो हि बलं भ्रात! देहस्य च धनस्य च।
अतस्त्वमात्मरक्षायै संघर्षं कर्तुमर्हसि ॥

श्रमो ध्रुवं महामन्त्रः कानने पथदर्शकः।
मित्रं बन्धुश्च रक्षा च धनं च बलमेव च ॥
अधिकारस्य लाभाय संघर्षं कुरु नित्यषः।
नष्णां संघर्षशीलानां सहायः परमेश्वरः।।
श्रमेण तपसा सृष्टा श्रमेणैव समुन्नतिः।
तस्मादात्मप्रकर्षाय संघर्शं कतुमर्हसि।।[6]

अर्थात् शरीर और समृद्धि के लिए संघर्ष एक महान शक्ति है, इसलिए मानव को आत्म रक्षार्थ व अपने उत्कर्ष के लिए संघर्ष करना चाहिए। पुरुषार्थ निश्चित ही एक महामन्त्र है। जैसे वन में मार्ग दिखाने वाला मानव ही उसका सच्चा मित्र होता है, उसी प्रकार परिश्रम मानव का मित्र, भाई, रक्षक, धन और बल होता है। अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए नित्य संघर्ष करते रहो, संघर्षशील की सहायता भगवान भी करते हैं। परिश्रम करने के लिए यह संसार बना है। श्रम व तप के बल से सृष्टि की उत्पत्ति हुई है। मेहनत से उन्नति सम्भव है। अतः अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष करने का स्वभाव धारण करना चाहिए। स्वयं संघर्ष करते हुए अमेरिका पहुंचे तो उन्होंने गम्भीर शोध अध्ययन किया, जिसकी भूरि-भूरि प्रशंसा प्रो. एड्विन आदि के द्वारा की गयी। आंबेडकर, सामाजिक समानता के पक्षधर थे। असमानता उन्हें कील के समान चुभती थीं। वे कहते थे कि प्रत्येक देश में सामाजिक अन्याय और सामाजिक अत्याचार से पीड़ित लोग मिलते हैं। परन्तु इनके अस्तित्व के कारण किसी भी देश को राजनीतिक स्वतंत्रता से वंचित नहीं किया जा सकता। स्वतंत्रता सबके लिए अनिवार्य गुण है। अमेरिका से एम.ए. और डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त कर बड़ौदा की रियासत में वापस आ गये और पूर्व प्रतिज्ञा-पत्र के अनुसार दस वर्षों तक वहाँ अपनी सेवाएं दी। अमेरिका जैसे देश में डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त करने पर उनके अधीनस्थ कर्मचारी भी उनके साथ छुआछूत का व्यवहार रखते थे-

तेन सार्धं पुमान्धर्माच्च्युत्कर्माणि समाचारन्।
कार्यालये जलं पातुं न प्राप्नोति कचादन्।।[7]

अर्थात् उनके साथ मानवता से गिरा हुआ व्यावहार किया जाता था। कार्यालय में उन्हें पानी भी नसीब नहीं होता था। बताया जाता है कि भृत्य भी उन्हें सरकारी फाइलें या अन्य प्रपत्र देना पाप समझता था। वह फाइलें मेज पर दूर से फेंक जाता था। अन्य जगहों पर भी वहाँ के सामाजिक वातावरण पर चर्चाएं की गयी हैं जिससे पता चलता है कि भारत में जन्म आधारित छुआछूत की भावना अत्यधिक थी। जिससे क्षुब्ध होकर

वे बम्बई के सिडनहम कॉलेज में राजनीति-अर्थशास्त्र में प्रोफेसर के पद को स्वीकार कर लिया। लेकिन वहाँ भी कुछ गुजराती प्रोफेसर अपने घड़े में से आंबेडकर को पानी पीने नहीं देते थे। जिसका विरोध प्रारंभ हो चुका था। बताया जाता है कि महाराष्ट्र के कोल्हापुर के राजकुमार श्रीसाहू ने छुआछूत की भावना को समाप्त करने का प्रयास किया था, जिसके संबंध में 'आंबेडकरदर्शनम्' में कहा गया है–

राजपुत्रे महाराष्ट्रे श्रीसाहू दीनवत्सलः।
छुआछूतप्रथा हन्तुमयतत महाबलः।।
मनुवाद विनाशाय परित्राणाय धीमताम्।
दरिद्राँश्च समुद्धर्तुम् प्रायतत महामतिः।।[8]

अर्थात् इसी समय महाराष्ट्र में एक राजकुमार श्रीसाहू जी के नाम से विख्यात हुए जिन्होंने छुआछूत की समाप्ति के लिए अत्यधिक प्रयास किया। ब्राह्मणवाद एवं पुरोहितवाद के विनाश के लिए अन्त्यजों की रक्षा के लिए, दीनहीन, दलित एवं अभावग्रस्त मानवों के कल्याण के लिए उन्होंने बहुत प्रयास किया। श्लोक में मनुवाद शब्द आया है यह मनुवाद वही है जो जाति विशेष पर आधारित था। जो जन्म पर विश्वास करता था। यानी जो ब्राह्मण जाति उत्पन्न हुई है वही श्रेष्ठ है। लेकिन यह पूरी तरह सत्य नहीं है। श्रेष्ठता तो मनुष्य के गुणों पर आधारित होती है। यदि उच्च कुल में जन्म लेने वाले व्यक्ति का आचरण अच्छा नहीं है तो उन्हें उच्च कैसे माना जा सकता है और निम्न जाति में जन्म लेने वाले उच्च गुण सम्पन्न व्यक्ति को निम्न कैसे माना जा सकता है? इस प्रकार आंबेडकर जन्मजात व्यवस्था के विरोधी थे। जाति-पाँत से अलग होकर एक श्रेष्ठ भारत का निर्माण करना चाहते थे, जिसमें कुछ हद तक वे सफल भी हुए दिखलाई पड़ते हैं। उनका मानना है कि सभी हिन्दू हैं इसलिए सभी हिन्दुओं का प्रकृति की सभी वस्तुओं पर समान अधिकार है। धर्म में स्वामी और दास नहीं बल्कि एक नागरिक का भाव होना चाहिए। आंबेडकर कहते थे कि जब अछूतजनों को स्वतंत्रता और सम्मान दिया जायेगा तभी देश आकाश का रूप धारण करेगा। सबके रहन-सहन, खान-पान, उत्सव-महोत्सव, वस्त्र-आभूषण समान होना चाहिए। सबकी स्वतंत्रता होनी चाहिए। लेकिन जब हिन्दू धर्म में समानता का भाव उत्पन्न नहीं हो सका, तब वे थक-हारकर धर्म परिवर्तन की घोषणा करते हैं–

हिन्दुकुले ध्रुवं देशे समुत्पन्नोऽस्मि भारते।
परं हिन्दुप्रतीके न मरिष्यामीति मरिष्यामतिः ॥[9]

अर्थात् मैं हिन्दू अवश्य पैदा हुआ हूँ परन्तु हिन्दू के रूप में मरूँगा नहीं। लेकिन वे यह भी कहते हैं कि धर्म परिवर्तन कोई बच्चों का खेल नहीं है। जिसमें जीवन के सुख-दुःख दोनों देखा गया, उसे छोड़ना बहुत कठिन होता है। जिसके संबंध में उन्होंने बहुत चिन्तन किया। तत्पश्चात् भारतीय धर्म बौद्ध धर्म को उन्होंने अपने समर्थकों के साथ स्वीकार कर लिया, जहाँ उनके व्यक्तित्व में राष्ट्रवाद झलकता है। जीवन के प्रति डॉ. भीमराव आंबेडकर का एक विशेष दृष्टिकोण था। वे गरीबी मुक्त भारत के विषय में सोचते थे। धन कमाने पर बल देते थे और सबके शिक्षित होने की प्रेरणा देते थे—

दरिद्रतासमो नास्ति कोऽप्यभिशापो भूतले।
तस्मात्श्रमो विधातव्यः शापादस्मात् विमुक्तये।।
उच्चादर्शप्रयत्नाभ्यां संचय धनुमुत्तमम्।
जीवितमात्मनस्सौम्य निर्मापय महत्तमम्।।
शिशून्स्वसृदुहितृश्च पाठयथ प्रयत्नतः।
दासपथ समाजेऽपि मानमूर्ध्वपदं तथा।।[10]

अर्थात् दरिद्रता इस भूमण्डल पर सबसे बड़ा अभिशाप है। इस अभिशाप से मुक्त होने के लिए तुम्हें प्रयत्न करना चाहिए। उच्च आदर्श और कड़ी मेहनत से पैसा कमाओ फिर अपना जीवन महान बनाओ। भाई, बहन और बेटियों को प्रयत्नपूर्वक पढ़ाओ, उन्हें समाज में सम्मान और ऊँचा पद दिलाओ। इस प्रकार हम देखते हैं कि आधुनिक संस्कृत में आंबेडकर समाज सुधारक के रूप में चित्रित किये गये हैं, जिनका जीवन के प्रति एक सकारात्मक दृष्टिकोण रहा है। उन्होंने अपने अनुभव और विवेक से भारत को समृद्ध और शक्तिशाली बनाने का प्रयास किया है।

सन्दर्भ :

1. भीमाम्बेडकरशतकम्, 1
2. वही, 28
3. अम्बेडकरदर्शन, 2/7-8
4. वही, 2/10
5. वही, 2/14
6. वही, 3/11-14
7. वही, 4/3
8. वही, 4/9-10
9. वही, 6/14
10. वही, 17/107-109